शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-2.0
Vol.-2; issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No- 126-128

©2025 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

अखिलेश्वर
शोधछात्र,
प्राच्यसंस्कृत विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ.

Corresponding Author :
अखिलेश्वर
शोधछात्र,
प्राच्यसंस्कृत विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ.

वाल्मीकि रामायण में वर्णित आश्रम निर्माण एवं प्रबन्धन

शोधसार : रामायणकाल में आश्रम जीवन के चार आश्रमों और तपस्थली दोनों के लिए प्रयोग होता था। ये नगरों से दूर, अरण्यों में निर्मित होते थे। ऋषि, तपस्वी, ब्रह्मचारी और वानप्रस्थी इन आश्रमों में निवास करते थे। आश्रमों का निर्माण प्राकृतिक संसाधनों जैसे फल, फूल, जल और यज्ञोपयोगी सामग्री की उपलब्धता के अनुसार किया जाता था। आश्रमवासी, पर्णशाला और आंतरिक कुटज में रहते थे। लक्ष्मण द्वारा पंचवटी में निर्मित पर्णकुटी इसका उदाहरण है। आश्रमों में यज्ञशालाएँ, अतिथिशालाएँ, विशाल भवन और सुव्यवस्थित परिसरों का कुशल प्रबन्धन होता था। कुलपति आश्रम का प्रबन्धन करते थे। आश्रम जीवन में संयम, सादगी, सत्य और शिष्टाचार का विशेष महत्व था। खान-पान में संतोष, वन्य फलों का सीमित उपयोग और साधारण वस्त्र अनिवार्य थे। तपस्या का उद्देश्य हृदय की वासनाओं का त्याग और आत्मिक उन्नति था। अध्ययन, साधना, यज्ञ स्वाध्याय आश्रम का मुख्य कार्य था।

कूटशब्द : आश्रम, रामायण, यज्ञशाला, तपस्या, शिष्टाचार, कुलपति, प्रबन्धन।

प्रस्तावना : आ उपसर्ग पूर्वक श्रम धातु से घञ् प्रत्यय के योग में आश्रम शब्द का निर्माण होता है जिसका अर्थ है- जहाँ तप किया जाता हो। रामायण काल में जीवन स्तर (चारो आश्रम) एवं तपस्थली (तपोभूमि) दोनों के अर्थ में आश्रम शब्द प्राप्त होता है। ये आश्रम नगर से दूर अरण्यों में निर्मित थे। जो नगर के शोर से दूर रहकर आत्म उन्नति रहने वाले प्रमाता को अनायास ही अपने शान्त एवं एकान्त वातावरण से आकर्षित कर लेते हैं। तत्काल में ऋषि, तपस्वी, बह्मचारी एवं वानप्रस्थी आश्रमों में ही निवास करते थे। आश्रमों में अध्ययन – अध्यापन चिन्तन (शोध) आदि होते रहते थे।

आश्रम निर्माण हेतु ऐसे स्थान का चयन किया जाता था। जहाँ एकान्त के साथ ही जीविका हेतु सुगमतापूर्वक फल-फूल, मूल जल एवं यज्ञ-यज्ञादि हेतु समिधा, कुश आदि प्राप्त हो जाए। इसे ध्यान में

रखते हुए ही श्रीराम लक्ष्मण से कहते हैं कि जहाँ वन और जल दोनों हो तथा समीप ही समिधा फूल, कुश सरलता से उपलब्ध हो सके।[1]

आश्रम के मुख्य रूप से दो भाग होते हैं बाह्य भाग पर्णशाला कहलाता है और आंतरिक भाग कुटज कहलाता है। लक्ष्मण अपने हाथो हाथों से पंचवटी में एक विस्तृत पर्ण कुटी क निर्माण करते हैं। सर्वप्रथम मिटटी से दीवाल खड़ी करते है तत्पश्चात उसमें सुन्दर एवं सुदृढ़ स्तम्भ लगाते हैं एवं खंभों के ऊपर बड़े-बड़े बाँस तिरछे कर के रखे फिर बाँसों के ऊपर शमी की शाखाएँ फैला दीं और उन्हें मजबूत रस्सियों से कसकर बांध दिया। इसके बाद ऊपर से कुश सरकंडे, कास और पत्ते बिछाकर उस पर्णशला को छा देते हैं नीचे की भूमि को बराबर करके कुटी को बड़ा रमणीय बना देते हैं। इस प्रकार लक्ष्मण ने श्रीराम जी के लिए परम उत्तम निवास गृह निर्माण किया। तैयार करने के पश्चात् गोदावरी नदी तट पर जाकर स्नान करते हैं एवं कमल पुष्प और फल लाकर शास्त्रीय विधि से देवताओं को पुष्प बलि अर्पित करते हैं एवं वास्तुशान्ति करके उन्होंने वह पर्णशाला जीरामजी को दिखाते हैं।

पर्णशालां सुविपुलां तत्र संघातमृत्तिकाम् ।
सुस्तभा मस्करैदीर्घैः कृतवंशां सुशोभनाम्।।
शमीशाखाभिरास्तीर्य दृढ़पाशावपाशिताम्।
कुशकाशशरैः पर्णैः सुपरिच्छादितां तथा।।
शमीकृततलां रम्यां चकार सुमहाबलः।
निवासं राघवस्यार्थ प्रेक्षणीयमनुत्तमम्।।
स गत्वा लक्ष्मणः श्रीमान नदीं गोदावरीं तदा।
स्नात्वा पद्मानि चादाय सफलः पुनरागतः।।
तया पुष्पबलिं कृत्वा शान्तिं च स यथाविधि।
दर्शयामास रामाय तदाश्रमपदं कृतम्।।[2]

तपस्वियों के कई तपस्वियों कुटिया होती थीं उसे तपोवन कहते थे। तपोवन का पवित्रतम भाग यज्ञशाला कहलाता था । अग्निहोत्र या यज्ञ करने के हेतु यह एक विशाल क्षेत्र होता था इसमें उत्तरपूर्वाभिमुख वेदी बनी होती थी । आश्रम में भरत के आगमन की सूचना प्राप्त होते ही महर्षि भरद्वाज अग्निशाला में प्रवेश करके जल से आचमन करते हैं तथा ओंठ पोछकर भरत का आथित्य सत्कार करने के लिए विश्वकर्मा आदि का आह्वाहन करते हैं।

अग्निशालां प्रविश्याथ पीत्वापः परिमृज्य च।
आतिथ्यस्य क्रियाहेतो विश्वकर्माणमाह्वयत।।[3]

दण्डकारण्य में श्रीराम, लक्ष्मण, सीता प्रवेश करते ही बड़ी बड़ी अग्निशालाएँ देखते हैं। **विशालैरग्निशरणैः स्रुग्भाण्डैरजिनैः कुशैः॥[4]** भरत को सेना सहित रुकने के लिए भरद्वाज आश्रम में समुचित व्यवस्था थी इससे आश्रम की विशालता प्रदर्शित होती है। उज्जवल चार-चार कमरों से युक्त गृह, हाथी थोड़ों के लिए शालाएँ, अट्टालिकाओं तथा सतमंजिले महलों से युक्त सुन्दर नगरद्वार भी बने थे। राजपरिवार के लिए सुन्दर द्वार से युक्त दिव्य भवन श्वेत बादलों के समान शोभा पा रहा था। उसे सफेद फूलों की मालाओं से सजाया गया और दिव्य सुगन्धि से सींचा गया था। वह महल चौकोना तथा बहुत बड़ा था उसमे संकीर्णता का अनुभव नहीं होता था। उसमें सोने, बैठने सवारियों के लिए अलग अलग स्थान थे।

चतुः शालानि शुभ्राणि शालाश्च गजवाजिनाम्।
हर्म्यप्रासादसंयुक्ततोरणानि शुभानि च।।
सितमेघनिभं चापि राजवेश्म सुतोरणम्।
शुक्लमाल्यकृताकारं दिव्यगन्धसमुक्षितम् ।।
चतुरस्त्रमसम्बाधं शयनासनयानवत्।
दिव्यैः सर्वरसैर्युक्तं दिव्यभोजनवस्त्रवत।।[5]

इससे ज्ञात होता है कि इनका आश्रम तत्कालीन सबसे बड़े आश्रमों में से एक था। अतिथियों हेतु अतिथिशालाओं का निर्माण भी हुआ रहता था। श्रीराम, सीता, लक्ष्मण के शरभङ्ग ऋषि के आश्रम पर पहुंचने पर महर्षि उन्हें आतिथ्य के लिए मिमन्त्रण देकर ठहरने के लिए स्थान देते हैं। अर्थात वहाँ पर अतिथिशाला बना हुआ था।

तस्य पादौ च संगृह्य रामः सीता च लक्ष्मणः ।
निषेदुस्तदनुज्ञाता लब्धवासा निमन्त्रिता।।[6]

शरभङ्ग ऋषि के निर्देशानुसार श्रीराम सीता और लक्ष्मण जी सुतीक्ष्ण आश्रम में जाते हैं और वहाँ भी रात्रि निवास करते हैं। इससे वहाँ भी अतिथिशाला प्रमाणित होती है।

अन्वास्य पश्चिमां सन्ध्यां तत्र वा समकल्पयत्।
सुतीक्ष्णस्याश्रमे रम्ये सीतया लक्ष्मणेन च।।[7]

आश्रम का अधिपति कुलपति कहलाता था जिसके नेतृत्व में आश्रम का संचालन होता था। रामायण काल में अगस्त्य, भरद्वाज, वाल्मीकि तत्कालीन सुविख्यात कुलपति थे। वनों में आश्रम रहने के कारण वहाँ हिंसक पशु भी निवास करते थे जो तपस्वी और ब्रह्मचारी यहाँ अपवित्र अथवा असावधान अवस्था में मिल जाता है उसे वे राक्षस और हिंसक पशु इसी वन में खा जाते हैं।8 वन में जाने के लिए महर्षि लोग वन के भीतर मार्ग बना लेते थे।9 चाहे आश्रम वासी हो या कोई अतिथि आश्रम में सबसे शिष्टाचार की अपेक्षा होती थी। आश्रम स्थान में हास-परिहास अच्छा नहीं बताया जाता है।

विशेषेणाश्रमस्थाने हासोऽयं न प्रशस्यते ॥[10]

भरद्वाज आश्रम में पहुंचकर भरत अपने साथ के लोगों को आश्रम से एक कोस दूर रोककर अपने सभी अस्त्र-शस्त्र रखकर पैदल पुरोहित मन्त्रियों के साथ प्रवेश करते हैं।11 महातेजस्वी श्रीराम तापसों के आऊम मण्डल को देखते ही अपने धनुष की प्रत्यञ्चा उतार दिए तब आश्रम में प्रवेश किए। **अभ्यगच्छन्महातेजा विर्ज्य कृत्वा महद् धनुः।।**[12] महर्षि अगस्त्य के प्रभाव से उनके आश्रम में कोई मिथ्यावादी, क्रूर, शठ, नृशंस अथवा पापाचारी जीवित नहीं रह सकता था।

नात्र जीवेन्मृषावादी क्रूरो वा यदि वा शठः।
नृशंसः पापवृत्तो वा मुनिरेष तथाविधः।।[13]

आश्रमवासियों को खान पान पर संयम रखना होता था। **यथालब्धेन सन्तोषः कर्तव्यस्तेन मैथिली।।**[14] वन में जो उपलब्ध हो उसी स सन्तुष्ट होना होता था। वन्य फलों को तोड़ा नहीं जाता था स्वयं से गिरे हुए फलों को ही खा सकते थे।

वृसी (उदुम्वर काष्ठ का बना) विष्ट (दर्भ का बना आसन) जटाबंधन (जटाओं को बांधने की डोरी), (चोरी कमंडलुक कहा), कौपीन (लंगोट), काष्ठ रज्जु (लकड़ियां बांधने की रस्सी), काष्ठभार, मौजी (मूंज), काषाय वस्त्र, वल्कल पेड़ की छाल, यज्ञ-सूत्र (पवित्र धागा), यज्ञ भांड (यज्ञ में प्रयुक्त होने वाले बर्तन) तपस्वियों के दैनिक उपयोग की ये वस्तुएँ लव और कुश को रामायण गान के पश्चात प्रसन्न होकर मुनियों ने उन्हें प्रदान किया।[15]

पस्या का आचरण तपस्वियों का सबसे प्रमुख व्यापार था, वही उन्हें अरण्यों की एकांत शांति की ओर आकृष्ट करता था तपस्या के अन्तर्गत आत्म-संयम, आत्म त्याग और कपट सहन के विविध प्रकार के व्रत आते थे जिनका लक्ष्य हृदय की वासनाओं को दूर करना था। तपस्या की अवधि में तपस्वियों को धर्म पालन, वेदों का स्वाध्याय नियताहार इंद्रिय संयम सदाचार सत्य और समाधि का अभ्यास करना पड़ता था।

निष्कर्ष : रामायणकालीन आश्रम केवल निवास स्थल नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और सांस्कृतिक आदर्श केंद्र थे। यहाँ तप, साधना और विद्या से समाज को अनुशासन, सत्य, आत्मसंयम और शिष्टाचार की शिक्षा मिली। आश्रमों ने मानव को वासनाओं पर नियंत्रण और आत्मिक उन्नति की प्रेरणा दी। ये आदर्श केन्द्र आज भी भारतीय जीवन और संस्कृति के मूल संदेश को प्रदर्शित करते हैं।

सन्दर्भ सूची :

1. वाल्मीकि ररामायण अरण्यकाण्ड 15/5
2. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 15/21-25
3. वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 91/11
4. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 1/4
5. वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 91/32-34
6. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 5/26
7. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 7/23
8. वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 119/20
9. वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 119/21
10. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 62/6
11. वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 90/1-2
12. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 1/10
13. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 11/90
14. वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड 28/17
15. वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड 4/20-25

•